बीसवीं सदी की एक जैनेतर जैन विभूति : कुँवर दिग्विजय सिंह

डॉ० के० एल० जैन

संस्कृत महाविद्यालय रायपुर, म० प्र०

जैनेतर विद्वानों का जैनधर्म के प्रचार-प्रसार में योगदान

भगवान् महावीर के युग से जैन संस्कृति का इतिहास बताता है कि जैनधर्म के प्रचार-प्रसार में जैनेतर धर्मावलम्बियों ने बहुमुखी योगदान किया है। महावीर के प्रथम गणधर इन्द्रभूति गौतम प्रारम्भ में स्वयं एक वैदिक विद्वान् थे। उनके अन्य गणधर भी जैनेतर विद्वान् ही थे। हमारी द्वादशांगी इन्हीं गणधरों की देन है। यह अचरज की बात है कि महावीर के गणधरों में एक भी पार्श्वापत्य नहीं था। उत्तरवर्ती सदियों में हमें समन्तभद्र, पूज्यपाद, पात्रकेसरि, अकलंक, विद्यानन्द, हरिभद्रसूरि, आदि पुराणकार जिनसेन, कुन्दकुन्द के टीकाकार अमृतचन्द्र एवं अन्य आचार्यों के नाम मिलते हैं। उन्नीसवीं-बीसवीं सदी में भी हमें वर्णी-बन्धु, स्वामी कर्मानन्द और कुँवर दिग्विजय सिंह की गाथाएँ मिलती है। पूर्व के साथ पश्चिम के भी डा० हर्मन याकोबी, शूब्रिंग, ऐल्सडोर्फ, डा० चन्द्रभाल त्रिपाठी, डा० नाकामुरा और यूनो, अर्नेस्ट वेंडर, मैडम कोलेकैले, प्रो० डैलू, डा० ए० एल० वाशम आदि विद्वानों के नाम सुज्ञात हैं। महावीर काल से लेकर अबतक उपरोक्त और अन्य सभी जैनेतर जैन मान्यताओं की तर्कगर्भिता, सामयिक उपयोगिता एवं व्यापकता से प्रभावित हुए। अनेकों ने जैनधर्म ग्रहण कर उसके प्रसार और अध्ययन में योगदान किया। अनेक अपने पन्थ में रहकर ही जैन विद्याओं के प्रकाशन एवं सम्वर्धन में योगदान कर रहे हैं।

बीसवीं सदी के प्रारम्भ के प्रमुख जैन-संस्कृति उन्नायक जैनधर्म से प्रभावित होकर जैन ही बन गये थे। इनमें से वर्णी-बन्धुओं – आ० गणेश वर्णी, आ० भगीरथ वर्णी को कौन नहीं जानता ? उन्होंने जैन एवं जैनेतर समाज को आध्यात्मिक उत्थान की सरिता में निमिज्जित कर सत्पथ की ओर उन्मुख कराया। इस लेख में हम ऐसी ही एक अन्य विभूति का परिचय दे रहे हैं जो जैन जगत में आज प्रायः अज्ञात है, पर जिसने इस सदी के लगभग तीन प्रारम्भिक दशकों में सारे उत्तर भारत में जैनधर्म की दुन्दुभि बजाई थी एवं आर्यसमाज के आरोपों का सप्रमाण उत्तर देकर अनेक क्षेत्रों में जैनधर्म की प्रतिष्ठा बढ़ाई थी। इस विभूति का नाम है : ब्र० कुँवर दिग्विजय सिंह।

जन्म एवं शिक्षा

कुँवर दिग्विजय सिंह का जन्म मंगलवार, ५ अगस्त १८८५ को बीधूपुर (जिला इटावा, उ० प्र०) में हुआ था। उनके पिता ठाकुर भगत सिंह जी अपने गाँव के रईस एवं जमींदार थे। उस समय कुँवर साहब के चाचा ठाकुर रघुबीर सिंह महाराजा बीकानेर के प्रधानमन्त्री थे। वे क्षत्रिय वर्ण के अग्निकुल के भदौरिया वंश की कुल्हैया शाखा में उत्पन्न हुए थे। उन दिनों इनका परिवार धन-धान्य-सम्पन्न, विद्यावान् एवं राजसम्मान आदि से प्रतिष्ठित था। हमारे मित्र नन्दलाल ने इनके गाँव का पर्यटन किया है। कुँवर परिवार की गढ़ी आज भी मौजूद है पर बीधूपुरा गाँव ने कोई विशेष प्रगति की हो, ऐसा नहीं लगता। कुँवर साहब दो भाई थे। आपके अनेक प्रपौत्र आज भी इटावा, दिल्ली एवं जयपुर में रहते हैं। आपके एक प्रपौत्र ने दिल्ली में 'भादोरिया उद्योग' नामक एक ख्यातिप्राप्त संस्थान स्थापित किया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुँवर साहब ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा अपने गाँव के स्कूल में ही पाँच वर्ष की उम्र से प्रारम्भ की। कुछ समय पश्चात् वे अपने नाना बाबू ब्रह्मासिंह के घर गये। वे छोटी जुही, कानपुर में रहते थे। वहाँ इन्होंने जिला स्कूल में दसवीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त की। इन्होंने संस्कृत का भी अध्ययन किया। उनका हृदय विचारक एवं विवेकवान् था। उनकी धर्म, देश और सदाचार पालन में गहरी आस्था थी। अपने कुलधर्म के प्रति अगाध आस्था के कारण उन्होंने भागवत, रामायण, महाभारत, गीता और वेदान्त का भी अच्छा अध्ययन किया।

उन दिनों उनके क्षेत्र में आर्यसमाज के विद्वानों द्वारा धर्म प्रचार किया जाता था। कुँवर साहब उनके सम्पर्क में आये। उनकी रुचि आर्यसमाज के प्रति जगी। तदनुसार, वे सन्ध्या-वन्दन आदि की दैनिक क्रियायें करने लगे।

जैनधर्म के प्रति आकर्षण का सुयोग

वे सन् १९०९ के फाल्गुन मास में अपनी जमींदारी के अधिकार-सम्बन्धी रजिस्ट्री कराने इटावा आए थे। तब इटावा के जैन-विद्वान् पं० पुत्तूलाल जी से उनका सम्पर्क हुआ। उनसे उन्होंने जैनधर्म की जानकारी प्राप्त की। उनकी पंडित जीसे जैनधर्म के विषय में चर्चा होने लगी। उनमें उन्हें अनेक शंकाओं का समाधान मिलता था। उनकी जिज्ञासा को भाँपकर पण्डित जी ने कुँवर साहब को दशलक्षण पर्व में इटावा आमन्त्रित किया। उन दिनों दशधर्मों का विवेचन तथा तत्वार्थसूत्र का प्रवचन सुनकर उन्हें जैनधर्म-विषयक विशेष रुचि जागृत हुई। तब से वे जैनधर्म के अध्ययन में समय देने लगे।

इसके पूर्व वे आर्य-समाज के समर्थन में भाषण देते थे। कभी-कभी वे आर्यसमाज की ओर से जैनधर्म के सिद्धान्तों पर प्रहार भी किया करते थे। कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी, सन् १९१० को आर्यसमाज, इटावा का वार्षिक उत्सव होने वाला था। उसमें आर्यसमाज के स्वामी सत्यप्रिय सन्यासी, पं० रुद्रदत्त शर्मा, स्वामी ब्रह्मानन्द आदि अनेक विद्वान् आए थे। उस समय कुँवर साहब ने इन विद्वानों के समक्ष अनेक शंकायें रखीं। ये अधिकतर वे ही थीं जो जैनियों की ओर से आर्यसमाज के विद्वानों के सामने रखी जाती थीं। वे इन शंकाओं का समुचित समाधान न कर सके। इससे कुँवर साहब के मन में जैनधर्म के प्रति और भी गहरी श्रद्धा हो गई।

इटावा में आर्यसमाज से शास्त्रार्थ करने के लिये वहाँ के वैद्य चन्द्रसेन जी ने पण्डित गोपालदास बरैया को आमन्त्रित किया था। उस शास्त्रार्थ के समय कुँवर साहब वहाँ उपस्थित थे। बरैयाजी की युक्तियों से वे बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने आर्यसमाज का परित्याग कर जैनधर्म में दीक्षित होने की घोषणा कर दी।

सोमवार, दिनांक १४ मार्च १९१० को इटावा में एक जैन सम्मेलन आयोजित किया गया। इसमें कुँवर दिग्विजय सिंह जी का जैनधर्म पर सर्वप्रथम हृदयग्राही एवं प्रभावक भाषण हुआ। न्याय दिवाकर पं० पन्नालाल जी एवं पं० गोपालदास जी बरैया ने उनके भाषण की सराहना करते हुए उनका माल्यार्पण द्वारा सम्मान किया। जैनतत्त्व प्रकाशिनी संस्था, इटावा ने कुँवर साहब की जीवनी और उनका भाषण प्रकाशित किया। यह अब अनुपलब्ध है।

ब्रह्मचर्य व्रत और जैनधर्म प्रचार

जैनधर्म की दीक्षा लेने के पश्चात् उन्होंने ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया। अनेक वर्ष तक वे ऋषभ दि० जैन ब्रह्मचर्याश्रम (गुरुकुल), मथुरा में सेवा करते रहे और बाद में उन्होंने अपनी सेवायें भारतवर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघ को समर्पित कर दीं। उन्होंने अपना जीवन जैनधर्म के प्रचार हेतु लगा दिया।

भा० दि० जैन संघ ने पहले तो शास्त्रार्थ संघ के नाम से अनेक स्थानों पर शास्त्रार्थ किये। पर जब आर्य समाज के विद्वान् स्वामी कर्मानन्द जैन बन गये, तब ये शास्त्रार्थ प्रायः बन्द हो गये। इसके बाद संघ ने जैनधर्म के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रचार का कार्य अपने हाथ में लिया। आधुनिक ढंग से प्रचार करने की दृष्टि से संघ ने एक उपदेशक विभाग स्थापित किया, एक उपदेशक प्रशिक्षण विद्यालय भी चलाया। इस विभाग में कार्य करने वालों में प्रमुख कुँवर साहब ही थे। अन्य सहयोगी विद्वानों में पं० हरिप्रसाद न्यायतीर्थ, पं० विद्यानन्द शर्मा, स्वामी कर्मानन्द, पं० अजित कुमार शास्त्री, वाणीभूषण पं० तुलसीराम काव्यतीर्थ, वेद विद्याविशारद पं० मंगलसेन एवं बाबू जयभगवान वकील आदि थे। तभी से कुँवर साहब ने जैन समाज की ओर से आर्यसमाज विद्वानों के साथ अनेक शास्त्रार्थ किये। सन् १९२७ में मई माह में बिलसी (बदायूँ) में आर्यसमाज के विद्वान् पं० वंशीधर जी शास्त्री के साथ भी उनका एक शास्त्रार्थ हुआ था। भा० दि० जैन संघ के उपदेशक विभाग के विद्वान् के रूप में उन्होंने देश भर में भ्रमण कर धर्मप्रचार किया। वे सिंह की तरह निर्भीक थे और उन्होंने शास्त्रार्थ द्वारा दिग्विजय भी प्राप्त की। इस कारण उनका दिग्विजय सिंह नाम 'यथानाम तथागुण' के अनुसार सार्थक था।

कुंवर साहब जन्मना जैन नहीं थे। उन्होंने परीक्षापूर्वक विवेक से जैनधर्म को उत्कृष्ट समझ जैनत्व ग्रहण किया। अतः वे रूढ़िवाद के विरोधी थे। यही कारण है कि जब १९२७ में दिल्ली में सुधारवादी जैनों द्वारा भा० दि० जैन परिषद् की स्थापना हुई, तब कुंवर साहब ने इस कार्य में प्रेरक महत्वपूर्ण भूमिका निबाही थी। इस परिषद् की स्थापना दि० जैन महासभा के पुराणपंथी लोगों की अनुदारता के फलस्वरूप की गई थी। इसके प्रमुख कर्णधारों में अजितप्रसाद जैन, बैरिस्टर चम्पतराय, म० भगवानदीन, ब्र० शीतलप्रसाद आदि थे। इस कार्य में कुंवर साहब की भूमिका से स्पष्ट होता है कि वे उदारता, प्रगतिशीलता एवं समाज सेवा की प्रतिमूर्ति थे। वे न केवल जैनधर्म में विश्वास ही करते थे, अपितु वे जैन समाज से उसके सिद्धान्तों के अनुरूप प्रवृत्ति करने के कार्य में रुचि रखते थे।

जैनधर्म के प्रचार एवं शिक्षण हेतु विन्ध्यांचल यात्रा

प्रारम्भ में जैन संघ प्रचारकों द्वारा ही धर्म प्रचार करता था। वे प्रायः संस्था विशेष के लिये चन्दा माँगने के उद्देश्य से जाते थे। वे भी शहरों में जाते थे, गाँवों का क्षेत्र उनसे अछूता था। पर उपदेशक-विभाग के निर्माण एवं कुंवर दिग्विजय सिंह जी के सक्रियण के कारण धर्म प्रचार यात्राओं का स्वरूप ही बदल गया। उपदेशक के रूप में कुंवर साहब ने उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, दिल्ली, हरयाणा एवं मध्य क्षेत्र की यात्रा की और जैनधर्म की प्रतिष्ठा में चार चाँद लगाये।

ब्रह्मचारी कुँवर दिग्विजय सिंह

श्री मूलचन्द्र बड़कुर, बड़ा शाहगढ़

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुंवर साहब एक सुयोग्य एवं ओजस्वी वक्ता थे। क्षत्रिय कुलोत्पन्न होने से उनमें तेज था। उपदेशक के रूप में वे श्वेत चादर ओढ़ते थे और चाँदी के फ्रेम वाला सफेद चश्मा लगाते थे। उनकी दाढ़ी बढ़ी हुई थी। इससे उनका व्यक्तित्व और भी मनमोहक हो गया था। उनके आकर्षक व्यक्तित्व ने उनकी भाषण कला को और भी चमकाया। वे जैन-जैनेतर समाज को जैनधर्म की प्रशंसा द्वारा अत्यन्त मनोमोहक रूप से प्रभावित करते थे। वे सिंह और लौह-पुरुष के समान स्थान-स्थान पर श्रोताओं को जैनधर्म की शिक्षा लेने हेतु बालकों और नवयुवकों को प्रेरित करते थे। जिस प्रकार आर्य-विद्वान् स्वामी कर्मानन्द के जैन धर्मावलम्बी बन जाने से जेनधर्म के प्रचार में बड़ा बल मिला, उससे भी अधिक प्रभाव कुंवर साहब के जैन-धर्म प्रचार का पड़ा। वे जीवन के अन्त तक जैनधर्म के श्रद्धानी एवं अनुयायी रहे। इसके विपर्यास में, स्वामी कर्मानन्द अन्तिम समय में जैनधर्म त्याग कर अरविन्दाश्रम चले गये थे।

उपदेशक के रूप में अनेक क्षेत्रों की यात्रा के अतिरिक्त कुंवर साहब ने विन्ध्य क्षेत्र के अनेक स्थानों की यात्रा की थी। सतना, शहडोल, छतरपुर और अन्य स्थानों के लोग आज भी उनकी धवल वेशभूषा एवं प्रभावी भाषणों का स्मरण करते हैं। सतना नगर में उन्होंने एक चौमासा बिताया और धर्म शिक्षा हेतु कक्षायें चलाई थीं। उनके भाषणों से प्रभावित होकर सतना नगर से दो व्यक्ति उनके साथ कुछ दिनों तक उनकी धर्म प्रचार-यात्रा में रहे। उनमें से एक बड़ा शाहगढ़ (छतरपुर) निवासी श्री मूलचन्द्र बढ़कुर भी थे। वे लगभग एक वर्ष तक उनके साथ रहे। उनके सत्संग से उनके मन में विचार आया था कि वे अपने पुत्रों को कुंवर साहब-जैसा बनायेंगे। सम्भवतः उनकी धार्मिक प्रेरणा ही श्री बढ़कुर के पुत्रों में धार्मिक एवं समाज सेवा के क्षेत्र में कार्य करने के लिये फलवती हुई है। यह सुखद संयोग ही है कि मेरी सूचना के अनुसार, उनके ही एक पुत्र प्रस्तुत साहित्य यज्ञ के होता है।

श्री दशरथ जैन एडवोकेट के अनुसार, कुंवर साहब को एक बार छतरपुर महाराज विश्वनाथ सिंह ने एक सर्व धर्म सम्मेलन के लिये जैनधर्म के प्रतिनिधि के रूप में छतरपुर आने के लिये निमन्त्रित किया था। उनके भाषणों का जैनेतरों के साथ जैनों पर भी प्रभाव पड़ा एवं छतरपुर में एक शर्मा बँध गया था। वे मूर्तिपूजा के मनोवैज्ञानिकतः समर्थक थे। छतरपुर के तत्कालीन समैयाजन उनके मूर्तिपूजा-सम्बन्धी तर्कों से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने उस समय अपने चैत्यालय में मूर्तिपूजा प्रारम्भ कर दी थी।

कर्मणा जैन की विशेषता

कुंवर साहब जन्मना जैन नहीं थे, कर्मणा जैन थे। जैनेतर कुल से सम्बद्ध होने के कारण उनकी कर्मता और भी प्रभावी एवं प्रेरक बन गई थी। इसका कारण उनका बहु-दर्शनी ज्ञान एवं बहु-आयामी परिवेश रहा है। इससे उसकी अनेकांत दृष्टि, अहिंसा भावना तथा ईश्वर के सृष्टि कर्तृत्व-सम्बन्धी जैन विचार उन्हें जम गये। पूज्य गणेशप्रसाद वर्णी पर भी यह तथ्य लागू होता है। वस्तुतः जैनेतर व्यक्ति किंचित् तटस्थ रहकर विषय का वस्तुगत विश्लेषण करता है, इसलिये वह प्रभावी हो जाता है। ऐसे ही व्यक्ति प्रेरणा-स्रोत होते हैं।

'अनेकान्त' के वर्तमान संपादक पं० पद्मचन्द्र शास्त्री के व्यक्तित्व और अभिव्यक्तित्व का निर्माण कुंवर साहब की प्रेरणा से ही हुआ है। उन्होंने पद्मचन्द्र जी के पिताजी से १९२७ में कहा था "पद्मचन्द्र को विद्वान् बनाओ।" बालक के सिर पर हाथ रखकर प्ररणा एवं आशीर्वाद भी दिया था। इसी कारण पं० पद्मचन्द्र जी ब्रह्मचर्याश्रम, मथुरा में और बाद में संघ के उपदेशक विद्यालय में अध्ययन हेतु भेजे जा सके। पण्डितजी ने अपने एक लेख में यह बात स्वीकार की है कि मैं निर्भीकतापूर्वक ऐसी बात लिख देता हूँ जिससे स्थितिपालक तथा अन्य लोग, सहन नहीं कर पाने के कारण, रुष्ट हो जाते हैं। उनकी यह स्पष्टवादिता की वृत्ति कुंवर साहब की ही देन है। वे 'अनेकान्त' के 'जरा सोचिये' स्तम्भ के अन्तर्गत ऐसे अनेक विषयों एवं प्रकरणों पर प्रकाश डालते हैं जिनसे समाज के वर्तमान के साथ भविष्य भी कीर्तिमान बन सकता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्तमान में, सामान्य जैन यह मानता है कि उसे अपना धर्म जन्मना उत्तराधिकार के रूप में मिला है। अतः उसकी धर्म में गहरी आस्था एवं प्रवृत्ति नहीं होती। यह ठीक उसी प्रकार की बात है कि जिन लोगों को पर्याप्त धन का उत्तराधिकार मिलता है, वे उसका महत्व नहीं आँक पाते। इसके विपर्यास में, जो अपने परिश्रम से संपत्ति अर्जित करते हैं, वे ही उसका सही मूल्यांकन करते हैं। उसके संरक्षण एवं अभिवर्धन के लिये दत्तचित्त रहते हैं। कुँवर साहब ने भी जैनधर्म को अपने विवेक से अपनाया था, अतः उन्होंने इसकी महत्ता और उपयोगिता का अपने लिये तथा समाज के लिये सदुपयोग किया।

मैंने आचार्य रजनीश के एक प्रवचन में एक लघु कथा पढ़ी थी। एक बार अमरीका का सर्वाधिक सम्पन्न व्यक्ति हैनरी फोर्ड लन्दन गया। वहाँ स्टेशन पर उसने सर्वाधिक सस्ते होटल के बारे में जानकारी की। पूछताछ के दौरान होटल वाले ने कहा, "आपका चेहरा अमरीका के हैनरी फोर्ड के प्रकाशित फोटो से मिलता है।" हैनरी ने कहा, "हाँ, मैं वही व्यक्ति हूं।"

"महोदय, पर आपके लड़के जब यहाँ आते हैं, तो सबसे मँहगा होटल पूछते हैं। और आप.....सबसे सस्ता होटल पूछ रहे हैं?

"मैं गरीब बाप का बेटा हूं। मैंने अपने श्रम एवं सूझ-बूझ से यह सम्पत्ति अर्जित की है। इसे मैं यों ही खर्च नहीं कर सकता। मेरे बेटे अमीर बाप के बेटे हैं। उन्हें बिना श्रम किये उत्तराधिकार में धन मिला है। अतः वे मँहगे होटलों में खर्च कर सकते हैं।"

इस घटना से हमें शिक्षा लेना चाहिये कि उत्तराधिकार में मिले धर्म में जो अच्छाइयाँ या विशेषताएँ हैं, उन्हें हम अध्ययन एवं विवेक से जानें-पहचानें। उनके प्रति आस्थावान् बनकर अपने जीवन में उतारें। हम जन्मना तो हैं ही, कर्मणा भी जैन बनने का प्रयत्न करें। कर्मणा जैन बनने का विशेष महत्व है।

असामयिक निधन

सन् १९१० से कुँवर साहब ने निरन्तर जैनधर्म की सेवा की। इस कार्य में उनके परिवार-जनों ने कोई बाधा नहीं डाली। उनकी पत्नी हिन्दूधर्म का ही पालन करती रही पर उसने उनके जैन बनने एवं उसके प्रचार में संलग्न रहने के लिये किसी प्रकार की आपत्ति नहीं की। हाँ, कुँवर साहब के कारण समूचे परिवार में उदारता के बीज अवश्य पनपे। यह सही है कि उनके पुत्रों ने उनके मार्ग का अनुकरण नहीं किया। शास्त्रार्थ संघ और फिर जैन संघ में रहकर कुँवर साहब के जैनधर्म का जितना प्रचार किया, उसके प्रति जैन समाज जितनी भी कृतज्ञता व्यक्त करे, कम है।

धर्मप्रचार के अतिरिक्त, उन्होंने कुछ साहित्य भी रचा था। हमारे मित्र श्री जैन ने इस साहित्य की प्राप्ति के लिये यत्न भी किया, पर वह उन्हें नहीं मिल सका। कहते हैं कि छोटी-मोटी कुल मिलाकर उनकी बाईस पुस्तकें हैं। इनका व्यक्तित्व एवं कृतित्व अनुसन्धान-विषय के रूप में लेना चाहिये। ऐसे कर्मठ, सेवाभावी व्यक्ति का निधन शास्त्रार्थ संघ के अम्बाला छावनी केन्द्र पर धर्मप्रचार करते हुए ७ अप्रैल १९३५ को हो गया। मेरे श्रद्धासुमन उन्हें समर्पित हैं*।

●

*. "जैन दर्शन" संघांक, 'वीर' के भिलाई अंक, पं० पद्मचन्द्र शास्त्री, एन० एल० जैन, डा० डी० के० जैन, भिंड आदि के लेखों-सूचनाओं एवं सहयोग के आधार पर साभार लिखित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org